[2013] 16 एस.सी.आर. 1181

गुलाबराव बाबूराव देवकर

बनाम

महाराष्ट्र राज्य व अन्य

(2013 की आपराधिक अपील संख्या 2113)

17 दिसंबर 2013

[एच.एल. गोखले और जे. चेलमेश्वर, जे.जे.]

जमानत-रद्द करना-आर्थिक अपराध-ओचित्य सार्वजनिक धन का गबन जिसके परिणामस्वरूप शहर नगर निगम को भारी नुकसान हुआ-अपीलकर्ता सहित आरोपियों की संख्या-कथित अपराध में आजीवन कारावास की सजा हो सकती है-अपीलकर्ता को सत्र न्यायाधीश द्वारा धारा 439 के तहत जमानत दी गई- उच्च न्यायालय द्वारा प्रत्यर्थी संख्या 2 व 4 की जमानत धारा 439(2) व 482 सीआरपीसी के तहत मंजूर की व अपीलार्थी की जमानत निरस्त कर दी- अपील पर, आयोजितः सत्र न्यायालय द्वारा पारित आदेश धारा 439 सीआरपीसी के परन्तुक की अनिवार्य आवश्यकता के उल्लंघन में पारित आदेश था। सत्र न्यायालय ने अभियोजक को यह बताने के लिए उचित और पूर्ण अवसर नहीं दिया कि अपीलकर्ता को जमानत क्यों नहीं दी जानी चाहिए-सत्र न्यायालय द्वारा

पारित आदेश विकृत था क्योंकि अभियोजक द्वारा बताये गए किसी भी कारक पर विचार नहीं किया गया था-जब अभियोजक ने सत्र न्यायालय को बताया था कि अपीलकर्ता की भूमिका उन तीन अन्य आरोपियों से कम नहीं थी जिनकी जमानत खारिज कर दी गई थी, तो सत्र न्यायालय को यथोचित परिधान के साथ अभिरक्षा के समर्थन की एेसे अवैध, अनुिचत, विकृत आदेश को परिस्थितियों पर विचार करना चाहिए था,-उच्च न्यायालय को धारा 439(2) सीआरपीसी के तहत अधिकार प्राप्त है-तथ्यों के आधार पर, उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश में जमानत रद्द करने को उचित ठहराने वाली ठोस और जबरदस्त परिस्थितियां दर्ज की गईं-इसके अलावा, अपीलकर्ता द्वारा गवाहों ओर यहा तक कि जांच अधिकारी पर भी दबाव बनाने के प्रयास किए गए थे इस आधार पर भी जमानत रद्द करने के उच्च न्यायालय के आदेश को गलत नहीं ठहराया जा सकता

हालाँकि, इस प्रकृति की सुनवाई, उस मामले के लिए हर सुनवाई, एक स्वतंत्र और भयमुक्त वातावरण में आयोजित की जानी चाहिए, संबंधित सत्र मामले की सुनवाई को मामले के विशिष्ट तथ्यों और परिस्थितियों के अनुसार निकटवर्ती जिले में स्थानांतरित किया जाना चाहिए-संहिता दंड प्रक्रिया संहिता, 1973-धारा 439 और 482-दंड संहिता, 1860-धारा 120-बी, 406, 409, 411, 420, 465, 466, 468, 471, 109 आर/डब्ल्यू एस। 34-भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 धारा 13(2) आर/डब्ल्यू एस। 13(1)(सी) और 13(1)(डी)।

अपीलकर्ता (56 अन्य लोगों के साथ) पर आईपीसी की धारा 120-बी, 406, 409, 411, 420, 465, 466, 468, 471, 109 के साथ धारा 34 आईपीसी और धारा 13 (2) के साथ पठित 13 और 13(1) के तहत अपराध का आरोप लगाया गया था। भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988) (1)(सी) (डी) के आरोप-पत्र मूल रूप से सार्वजनिक धन के गबन के बारे में था जिसके परिणामस्वरूप जलगांव नगर निगम को 169.60 करोड़ रुपये से अधिक का भारी नुकसान हुआ। महाराष्ट्र में. अपीलकर्ता के खिलाफ अन्य बातों के अलावा यह आरोप लगाया गया था कि जलगांव नगर निगम ने साजिश के तहत लाभार्थी के रूप में अपीलकर्ता की निर्माण कंपनी को अवैध रूप से 30 से अधिक ठेके दिए थे। अपीलकर्ता सहित अभियुक्त सं. 31 से 50 को सत्र न्यायाधीश ने सीआरपीसी की धारा 439(1) के तहत जमानत दे दी। हालाँकि, उच्च न्यायालय ने आक्षेपित आदेश द्वारा सीआरपीसी की धारा 439 (2) और 482 के तहत प्रतिवादी संख्या 2 से 4 द्वारा दायर आवेदन को स्वीकार कर लिया और अपीलकर्ता को दी गई जमानत रद्द कर दी।

वर्तमान अपील में विचार के लिए जो प्रश्न उठा वह यह था कि क्या उच्च न्यायालय ने अपीलकर्ता को दी गई जमानत रद्द करके गलती की है।

कोर्ट ने अपील खारिज करते हुए मानाः

1.1. मौजूदा मामले में, सत्र न्यायालय ने सीआरपीसी की धारा 439(1) के अनिवार्य प्रावधान का पालन नहीं किया था, जो यह बताता है कि किसी अपराध के आरोपी व्यक्ति को जमानत देने से पहलेआजीवन कारावास से दंडनीय (जैसा कि अपीलकर्ता के मामले में), और जो विशेष रूप से सत्र न्यायालय द्वारा विचारणीय है, यह सरकारी अभियोजक को जमानत के लिए आवेदन की सूचना देगा। मौजूदा मामले में, अपीलकर्ता सत्र न्यायाधीश के सामने पेश हुआ, जब उसकी जमानत की अर्जी पर विचार किया गया। सत्र न्यायाधीश ने आई.ओ. को सुना जावे एेसा एक आदेश पारित किया परंतु वहीं का वहीं मामले पर विचार किया धारा 439 (1) के तहत प्रावधान के तहत नोटिस अभियोजक को यह बताने का उचित और पूर्ण अवसर प्रदान करता है कि जमानत क्यों नहीं दी जानी चाहिए। इस मामले में प्रारंभिक आरोपपत्र स्वयं 268 पृष्ठों से अधिक का था। सत्र न्यायाधीश को अभियोजक को इस आरोप पत्र के आधार पर जवाब देने के लिए पर्याप्त समय देना चाहिए था, ताकि वह एक सुविचारित आदेश पारित कर सके। नतीजतन, जमानत का आदेश आरोप पत्र की अंतर्वस्तुआेंं को प्रतिबिंबित नहीं करता है। [पैरा 23] [1199-जी-एच; 1200-ए-डी]

1.2. जैसा कि जांच अधिकारी [डिप्टी एस.पी., जलगांव) ने अपने हलफनामे में बताया कि हालांकि मामले की सुनवाई तभी के तभी हुई थी, लेकिन अभियोजक ने अपीलकर्ता के खिलाफ प्रथम दृष्टया मामला दर्ज करने की ओर इशारा करते हुए एक विस्तृत तर्क दिया था। वर्तमान

अपराध के पंजीकरण के बाद अपीलकर्ता के पिछले आचरण को भी विस्तार से बताया गया था और साथ ही सबूत के साथ उसके आपराधिक इतिहास को भी बताया गया था, और यह तथ्य भी बताया गया था कि मुख्य आरोपियों में से 3 (यानी सुरेशदादा जैन और अन्य) की जमानत याचिका को दूसरे सत्र न्यायाधीश द्वारा खारिज कर दिया गया था तथा जलगांव नगर परिषद को 169 करोड़ रुपये की सदोष हानि हुई थी। इस प्रकार ट्रायल कोर्ट द्वारा पारित आदेश एक विकृत आदेश था क्योंकि कोर्ट ने इनमें से किसी भी कारक पर विचार नहीं किया था। [पैरा 24] [1200-ई-जी]

1.3. अभियोजक ने कम से कम 2 दिनों की रिमांड के लिए आवेदन किया जिसे अस्वीकार कर दिया गया। जाहिर है अभियोजक के आरोपी से पूछताछ के लिए समय की आवश्यकता थी और ऐसी स्थिति में कम से कम दो दिनों तक हिरासत में पूछताछ से इनकार नहीं किया जा सकता था। इससे प्रासंगिक जानकारी का पता लगाकर जांच में सहायता मिल सकती थी। हालाँकि, जमानत आदेश उसी दिन पारित कर दिया गया था। हालाँकि एक नागरिक की स्वतंत्रता, भले ही वह आरोपी हो, निस्संदेह महत्वपूर्ण है, लेकिन साथ ही जब अभियोजक ने अदालत को बताया कि अपीलकर्ता की भूमिका उन तीन अन्य लोगों से कम नहीं थी जिनकी जमानत खारिज कर दी गई थी, न्यायाधीश को उचित परिश्रम के साथ हिरासत में पूछताछ को उचित ठहराते हुए इन परिस्थितियों पर विचार करना चाहिए था। [पैरा 23, 25] [1200-सी; 1201-ए-डी]

1.4. सत्र न्यायाधीश द्वारा पारित आदेश सीआरपीसी की धारा 439(1) के प्रावधान की अनिवार्य आवश्यकता के उल्लंघन में पारित आदेश था। यह रिकॉर्ड पर मौजूद सामग्री की अनदेखी करने वाला एक आदेश भी है, और इसलिए उक्त आदेश औचित्यहीन और विकृत आदेश है। उच्च न्यायालय के पास सीआरपीसी की धारा 439 (2) के तहत शक्ति है कि वह जमानत देने के अनुचित, अवैध या विकृत आदेश को रद्द कर सके। यह रद्दीकरण का आधार आरोपी द्वारा स्वयं के दुराचार से स्वतंत्र आधार है। [पैरा 26] [1201-डी-एफ]

1.5. वर्तमान मामले में, अपीलकर्ता द्वारा गवाहों और यहां तक कि जांच अधिकारी पर दबाव डालने के लिए किए गए प्रयासों को डिप्टी एसपी (जांच अधिकारी) के हलफनामे के माध्यम से स्पष्ट रूप से रिकॉर्ड पर रखा गया है। उस आधार पर यह भी कहा जा सकता है कि यदि अपीलकर्ता को रोका नहीं गया तो वह गवाहों पर दबाव डालेगा। यह स्थिति होने के कारण, किसी को भी इस आधार पर जमानत रद्द करने के उच्च न्यायालय के आदेश में कोई दोष नहीं मिल सकता है। आदेश में जमानत रद्द करने को उचित ठहराने वाली ठोस और भारी परिस्थितियों को दर्ज किया गया है। किसी आर्थिक अपराध की प्रकृति और गंभीरता तथा समाज पर इसका प्रभाव हमेशा महत्वपूर्ण होता है। ऐसे मामले में जमानत आवेदनों पर आदेश पारित करते समय न्यायालय द्वारा उन्हें ईमानदारी से निपटाया जाना चाहिए। [पैरा 27] [1201-एफ-एच; 1202-ए]

1.6. अपीलकर्ता द्वारा उठाई गई आपत्ति कि प्रतिवादी संख्या 2 से 4 के पास जमानत रद्द करने की मांग के लिए आवेदन दायर करने का कोई अधिकार नहीं है, कायम नहीं रखी जा सकती। प्रतिवादी संख्या 2 से 4 ने सीआरपीसी की धारा 482 के तहत उच्च न्यायालय के अंतर्निहित क्षेत्राधिकार का आह्वान किया था, और उच्च न्यायालय के पास ऐसे आवेदन पर विचार करने की शक्ति है। [पैरा 28, 29 और 30] [1202-बी, एच; 1203-बी]

पूरन बनाम रामबिलास और अन्य 2001 (6) एससीसी 338: 2001 (3) एससीआर 432 पर निर्भरकिया।

दौलत राम बनाम हरियाणा राज्य 1995 (1) एससीसी 349: 1994 (6) पूरक। एससीआर 69; भागीरथसिंह बनाम गुजरात राज्य 1984 (1) एससीसी 284: 1984 (1) एससीआर 839; फ़िदा हुसैन बोहरा बनाम महाराष्ट्र राज्य 2009 (5) एससीसी 150: 2009 (3) एससीआर 998; सिद्धराम सतलिंगप्पा म्हेत्रे बनाम महाराष्ट्र राज्य और अन्य 2011 (1) एससीसी 694: 2010 (15) एससीआर 201; गुरचरण सिंह बनाम राज्य (दिल्ली प्रशासन) 1978 (1) एससीसी 118: 1978 (2) एससीआर 358; यूपी राज्य बनाम अमरमणि त्रिपाठी 2005 (8) एससीसी 21: 2005 (3) सप्ल। एससीआर 454; मसरूर बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य 2009

(14) एससीसी 286: 2009 (6) एससीआर 1030 और निम्मगड्डा प्रसाद बनाम केंद्रीय जांच ब्यूरो 2013(7) एससीसी 466-संदर्भित।

2. हालांकि इस अपील पर विचार नहीं किया जा रहा है, लेकिन यह पाया गया है कि अपीलकर्ता ने 4 अन्य आरोपियों के साथ, जिन्हें जमानत से वंचित कर दिया गया है, गवाहों को डराने-धमकाने के कई प्रयास किए थे और यहां तक कि जांच अधिकारी को भी धमकी दी थी। गवाहों में से कुछ जलगांव नगर निगम के कर्मचारी हैं, और जाहिर तौर पर अपीलकर्ता और 4 आरोपी, हालांकि जेल में हैं, फिर भी उन्हें प्रभावित करने के लिए हर संभव प्रयास कर सकते हैं, और अगर विचारण जलगांव में संचालित किया जाता है तो उसे दूषित कर सकते हैं। ऐसे विचारण तथा इस मामले जैसे हर परीक्षण, एक स्वतंत्र और भयमुक्त वातावरण में आयोजित किया जाना चाहिए। इसलिए, वर्तमान मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में, इस सत्र मामले की सुनवाई उस जिले के बाहर स्थानांतरित की जानी चाहिए। धुले जिले में स्थानांतरण करना उपयुक्त होगा क्योंकि वह जिला जलगांव जिले से सटा हुआ है, और यह बॉम्बे उच्च न्यायालय की औरंगाबाद पीठ के अधिकार क्षेत्र में भी आता है। [पैरा 31] [1203-एफ, जी; 1204-बी-सी]

केस कानून संदर्भ:

1994 (6) सप्ल. एससीआर 69 करने के लिए भेजा 11 के लिए

1984 (1) एससीआर 839 करने के लिए भेजा 12 के लिए

2009 (3) एससीआर 998 करने के लिए भेजा 17 के लिए

2010 (15) एससीआर 201 करने के लिए भेजा 18 के लिए

2001 (3) एससीआर 432 पर भरोसा 19 के लिए

1978 (2) एससीआर 358 करने के लिए भेजा 19 के लिए

2005 (3) पूरक एससीआर 454 करने के लिए भेजा 20 के लिए

2009 (6) एससीआर 1030 करने के लिए भेजा 21 के लिए

2013(7) एससीसी 466 करने के लिए भेजा 22 के लिए

आपराधिक अपीलीय क्षेत्राधिकार: आपराधिक अपील संख्या 2131/2013

आपराधिक अपील संख्या 2522/2012 में औरंगाबाद में बॉम्बे उच्च न्यायालय के निर्णय और आदेश दिनांक 06.08.2012 से।

अपीलकर्ता के लिए ए. वी. सावंत, सुधांशु एस. चौधरी, वात्सल्य विज्ञान।

प्रत्यर्थी के लिए बी एच मरालापल्ले, वी एन रघुपेथी, अमोल बी करांडे, मंजू जेटली, संजय खारडे, आशा गोपालन नायर

न्यायालय का निर्णय एच.एल. गोखले, जज

1. द्वारा सुनाया गया।

अनुमति दी गई।

2. यह अपील औरंगाबाद में बॉम्बे हाई कोर्ट के एक न्यायाधीश द्वारा दिनांक 6.8.2012 को दिए गए फैसले और आदेश को चुनौती देने का प्रयास करती है, जिसमें धारा 439 (2) व 482 के तहत प्रतिवादी संख्या 2 से 4 द्वारा दायर आपराधिक आवेदन संख्या 2522/2012 को स्वीकार किया गया था। उच्च न्यायालय के आदेश ने सिटी पुलिस स्टेशन, जलगांव में दर्ज अपराध संख्या 13/2006 में अपीलकर्ता को दी गई जमानत रद्द कर दी। अपीलकर्ता (56 अन्य लोगों के साथ) पर भारतीय दंड संहिता (संक्षेप में आईपीसी) की धारा 120-बी, 406, 409. 411, 420, 465, 466, 468, 471, 109 सपठित धारा 34 के तहत और भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धारा 13(2) के साथ पठित 13(1) (सी) और 13(1) (डी) के तहत आरोप लगाया गया था। अपीलकर्ता उस मामले में आरोपी नंबर 34 है। अपीलकर्ता को धारा 439 (1) सीआरपीसी के तहत आरोपी संख्या 31 से 50 द्वारा दायर आवेदनों के तहत एक समान आदेश द्वारा 21.5.2012 को जमानत दे दी गई थी। (धारा 439 (1) सीआरपीसी प्रभारी अतिरिक्त तदर्थ जिला न्यायाधीश क्रमांक 1 एवं अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश, जलगांव द्वारा) यह वह आदेश है जिसे उच्च न्यायालय ने रद्द कर दिया है। इस न्यायालय द्वारा 7.8.2012 को उच्च न्यायालय के संचालन पर रोक लगा दी गई है।

3. श्री ए.वी. सावंत, विद्वान वरिष्ठ वकील और श्री सुधांशु चौधरी अपीलकर्ता की ओर से उपस्थित हुए हैं। प्रथम प्रतिवादी-महाराष्ट्र राज्य की

ओर से विद्वान वकील श्री संजय खर्डे उपस्थित हुए। श्री बी.एच. मारलापल्ले, विद्वान वरिष्ठ वकील और सुश्री कामिनी जयसवाल, विद्वान वकील प्रतिवादी क्रमांक 2 से 4 के लिए उपस्थित हुए हैं।

4. उपरोक्त संदर्भित अपराध/एफआईआर क्रमांक 13/2006 दिनांक 3.2.2006 को सिटी पुलिस स्टेशन, जलगांव में दर्ज किया गया था। इसमें आरोप-पत्र पूरा होने के बाद दाखिल किया गयाजांच बहुत बाद में 25.4.2012 को हुई। यह मूलतः सार्वजनिक धन के गबन के बारे में है जिसके परिणामस्वरूप महाराष्ट्र में जलगांव नगर निगम को 169.60 करोड़ रुपये से अधिक का भारी नुकसान हुआ। यह निगम जनवरी 2004 तक एक नगर परिषद था। इसने झुग्गीवासियों के लाभ के लिए नगर निगम की भूमि पर 11,424 घर बनाने के लिए वर्ष 1997 में 'घरकुल' (यानी छोटा घर) नाम से एक आवास योजना तैयार की थी। जैसा कि ऊपर कहा गया है, हालांकि 57 आरोपी हैं, इस गबन में शामिल मुख्य व्यक्ति पूर्ववर्ती नगर परिषद के दो पूर्व अध्यक्ष, एक श्री सुरेशदादा जैन और एक प्रदीप रायसोनी, और एक निर्माण कंपनी के दो साझेदार बताए गए हैं। खानदेश बिल्डर्स अर्थात. राजेंद्र मयूर एवं जगन्नाथ वाणी. श्री सुरेशदादा जैन इस कंपनी के मुख्य शेयरधारक बताये जाते हैं।

5. कहा जाता है कि श्री सुरेशदादा जैन मई 1985 से जुलाई 1994 तक जलगांव नगर परिषद के अध्यक्ष रहे। इसके बाद वह 1995-2000 के

दौरान राज्य में शिवसेना-भारतीय जनता पार्टी (भाजपा) सरकार में आवास मंत्री थे। वह वर्तमान में जलगांव शहर से राष्ट्रवादी कांग्रेस पार्टी (एनसीपी) के विधायक हैं। वह हाल तक मौजूदा कांग्रेस-एनसीपी सरकार में मंत्री थे। अपीलकर्ता जलगांव (ग्रामीण) निर्वाचन क्षेत्र से राकांपा का विधायक भी है, और विवादित आदेश की तिथि पर वह राज्य सरकार में राज्य मंत्री था। इसके बाद उन्होंने मंत्री पद से इस्तीफा दे दिया है। 57 आरोपियों में से 4 की मौत हो चुकी है। शेष में से 2 आरोपी फरार हैं तथा उपरोक्त 2 पूर्व प्रधान एवं 2 ठेकेदार हिरासत में हैं। अपीलकर्ता समेत बाकी 47 आरोपियों को जमानत दे दी गई है.

6. 1997 में जब वे आवास मंत्री थे, श्री सुरेशदादा जैन ने उपरोक्त आवास योजना के लिए हुडको को जलगांव नगर परिषद को लगभग 66 करोड़ का ऋण देने के लिए राजी किया। कहा जाता है कि उन्होंने नगर परिषद में एक 'उच्चाधिकार प्राप्त समिति' के गठन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी, जिसे इस काम की निगरानी करनी थी। अपीलकर्ता इसमें से एक सदस्य था. योजना को 9 माह में पूरा करना था, लेकिन अब तक पूरा नहीं हो सका है. प्रदीप रायसोनी मई 1996 से मई 1997 के दौरान नगर परिषद के अध्यक्ष थे। आरोप-पत्र के अनुसार सभी मानदंडों और वैधानिक और अन्य कानूनी आवश्यकताओं का उल्लंघन करते हुए योजना का क्रियान्वयन खानदेश बिल्डर्स को सौंपा गया था। उन्हें भारी ब्याज-मुक्त मोबिलाइजेशन अग्रिम राशियां दी गई है, जिसके कारण उन्हें इतनी बड़ी

देनदारी हो गई है। काम पूरा नहीं होने और ऋण नहीं चुकाने से नगर निगम पर ब्याज राशि के प्रति देनदारियां बढ़ गई हैं और अब निगम को ऋण चुकाने में कुछ ओर साल लग जाएंगे।

7. उपरोक्त श्री सुरेशदादा जैन को मार्च, 2012 में गिरफ्तार किया गया था, और आरोप पत्र 25.4.2012 को दायर किया गया है। अपीलकर्ता को सीआरपीसी की धारा 160 के तहत दिनांक 16.5.2012 को (जलगांव पुलिस स्टेशन में उपस्थित होने के लिए) नोटिस जारी किया गया था। 19.5.2012 को अपीलकर्ता 31 से 50 मय अभियुक्तत ने धारा 439(1) के तहत जमानत के लिए आवेदन किया, और उन्हें 21.5.2012 को पारित उपरोक्त संदर्भित आदेश द्वारा रिहा कर दिया गया। इस आदेश को उच्च न्यायालय के आक्षेपित आदेश द्वारा निरस्त कर दिया गया है। हमें सूचित किया गया है कि ट्रायल कोर्ट द्वारा आरोप तय कर दिए गए हैं, और साक्ष्य की रिकॉर्डिंग अभी शुरू नहीं हुई है। विभिन्न आरोपों में से, धारा 409 के तहत आरोप तय नहीं किया गया है, लेकिन राज्य के विद्वान वकील श्री संजय खर्डे ने हमें सूचित किया है कि राज्य इस धारा के तहत भी आरोप तय करने के लिए आवेदन करने जा रहा है। 2.6.2012 को एक पूरक आरोप पत्र भी दायर किया गया है।

8. अभियोजन के लिए प्रारंभिक आरोप-पत्र रिकॉर्ड पर रखा गया है। यह 268 से अधिक पृष्ठों में है और इसमें विभिन्न विवरण शामिल हैं। कहा

जाता है कि श्री सुरेशदादा जैन ने प्रासंगिक समय में 'शहर विकास अगाड़ी' (यानी सिटी डेवलपमेंट फ्रंट) नामक समूह के तहत जलगांव नगर परिषद में बहुमत का नेतृत्व किया था। यह आरोप लगाया गया है कि श्री सुरेशदादा जैन ने मंत्री के रूप में निम्न आय वर्ग योजना का उपयोग सदोष लाभ के लिए करने का निर्णय लिया, जिसके परिणामस्वरूप नगर निगम को भारी नुकसान हुआ और स्वयं और अन्य षड्यंत्रकारियों के लिए सदोष लाभ। यह आरोप लगाया गया है कि उन्होंने इस विशेष परियोजना के लिए हुडको से धन की व्यवस्था की, और यह सुनिश्चित किया कि किसी अन्य ठेकेदार द्वारा दी गई कम बोली को नजरअंदाज करते हुए, खानदेश बिल्डर्स को अत्यधिक दरों पर अनुबंध दिया जाए। पार्षदों को उपरोक्त संदर्भित समिति के सभी निर्णयों को मंजूरी देने के लिए मनाया गया था जिसे पहले उपरोक्त प्रदीप रायसोनी द्वारा नियंत्रित किया गया था। जांच से पता चला कि समिति केवल नाम के लिए थी, और यह रायसोनी ही था जो सभी निर्णय ले रहा था। कोई लिखित आदेश पारित नहीं किया गया. 'उम्मीद मंजुरी' (यानी प्रत्याशा में अनुमोदन) के तहत बिल्डरों को बड़ी अग्रिम राशि जारी की गई थी, और सभी नगर पार्षदों से उन निर्णयों पर हस्ताक्षर कराए गए थे।

9. जब अपीलकर्ता सहित अभियुक्त क्र. सं. 31 से 50 ने धारा 439 के तहत जमानत के लिए याचिका दायर की, प्रत्यर्थी नंबर 2 कार्यवाही में उपस्थित हुआ और विशेष लोक अभियोजक की सहायता करने की अनुमति

मांगी। यह बात सेशन जज के आदेश में दर्ज है. आदेश में आपत्ति दर्ज की गई है कि यह सार्वजनिक धन से जुड़ा एक गंभीर आर्थिक अपराध था, और अपीलकर्ता जलगांव में एक शक्तिशाली और प्रभावशाली व्यक्ति था, और ऐसी संभावना थी कि वह अपनी स्वतंत्रता का दुरुपयोग कर सकता है और अभियोजन के साथ छेड़छाड़ कर सकता है। विद्वान सत्र न्यायाधीश ने हालांकि देखा है कि उपरोक्त आशंका से परे ऐसा कुछ भी नहीं बताया गया है कि अपीलकर्ता ने अपनी स्थिति का दुरुपयोग किया हो। विद्वान न्यायाधीश ने अपराध की प्रकृति को देखते हुए कहा कि यह कहा जा सकता है कि अभियोजन पक्ष के पास एकत्र किए जाने वाले और उपलब्ध होने वाले साक्ष्य दस्तावेजों के रूप में होने चाहिए, और अभियोजन पक्ष के गवाहों पर दबाव डालकर आशंका को उचित प्रतिबंधों द्वारा रोका जा सकता है। विद्वान न्यायाधीश ने इसलिए कहा कि अभियुक्त को जेल में रखने का कोई मतलब नहीं है, खासकर उन परिस्थितियों में जब अपराध की जांच पूरी होने के कगार पर थी। इसलिए, न्यायाधीश ने उन सभी आरोपियों को रु. 50,000/- की राशि के निजी मुचलके और इतनी ही राशि की एक सॉल्वेंट ज़मानत पर रिहा कर दिया।

10. प्रतिवादी संख्या 2 से 4 ने आपराधिक आवेदन संख्या 2522/2012 दिनांक 11.6.2012 दायर करके इस आदेश को रद्द करने की मांग की, और उच्च न्यायालय ने आक्षेपित आदेश पारित करके इसकी अनुमति दे दी है। हाई कोर्ट ने अपने आदेश में कहा है कि:-

(i) अपीलकर्ता को 21.5.2012 को गिरफ्तार किया गया था और उसी दिन रिमांड रिपोर्ट के साथ कुछ पार्षदों के साथ विशेष अदालत में पेश किया गया था। उसी दिन जमानत अर्जी दाखिल की गई।

(ii) अपने आदेश के पैराग्राफ 14 में विद्वान न्यायाधीश ने कहा कि सीआरपीसी की धारा 439(1) के प्रावधान के तहत, जहां संबंधित व्यक्ति पर ऐसे अपराध का आरोप है जो आजीवन कारावास से दंडनीय है (जैसे वर्तमान मामले में धारा 409 आई.पी.सी.), सत्र न्यायाधीश को सरकारी वकील को जमानत के लिए आवेदन का नोटिस देना होगा, जब तक कि कोई लिखित रूप में कारण हो कि, ऐसी सूचना देना व्यावहारिक नहीं है। मौजूदा मामले में, सरकारी वकील को नोटिस देने का कोई आदेश नहीं दिया गया और न ही जमानत देने के आदेश में इसके कारण दर्ज किए गए। उसी दिन जो एकमात्र आदेश दिया गया वह था "आई.ओ. (यानी जांच अधिकारी) को कहने के लिए" कहा गया ओर वहीं मामले की तुरंत सुनवाई हुई।

(iii) फिर भी, विशेष अभियोजक ने कम से कम 2 दिनों की पुलिस हिरासत का अनुरोध किया था। हालाँकि, इसे अस्वीकार कर दिया गया था। इसके बाद उन्होंने आवेदन का विरोध करने के लिए 8 पन्नों का जवाब दाखिल किया, लेकिन विद्वान सत्र न्यायाधीश द्वारा पारित आदेश में उक्त जवाब या उसकी अन्तर्वस्तुओं का उल्लेख नहीं था।

(iv) आक्षेपित आदेश के पैराग्राफ 15 में कहा गया है कि अपीलकर्ता को एक भी दिन के लिए हिरासत में नहीं लिया गया और न ही सलाखों के पीछे रखा गया। यह इस तथ्य के बावजूद था कि अपीलकर्ता के भाई को 5 कार्य आदेश देने जैसा रिकॉर्ड था, और अभिरक्षात्मक अनुसंधान के दौरान अधिक सामग्री एकत्र की जा सकती थी।

11. विद्वान न्यायाधीश ने अपने आदेश के पैराग्राफ 16 में उल्लेख किया है कि दी गई जमानत रद्द करने के लिए ठोस और भारी परिस्थितयां आवश्यक है, जैसा कि इस न्यायालय द्वारा समय-समय पर निर्धारित किया जाता है। उन्होंने इस मामले में दोलत राम बनाम हरयाणा राज्य 1995 (1) एससीसी 349 मामले के फैसले का हवाला दिया है। हालाँकि, उन्होंने पैराग्राफ 17 में यह भी कहा है कि यदि आदेश विवेक का गलत और मनमाना प्रयोग करके किया गया है, तो यह रद्द करने योग्य है। उन्होंने आगे कहा कि ऐसे मामले में अपराध की प्रकृति और गंभीरता तथा विशेष रूप से आर्थिक अपराधों में समाज पर प्रभाव हमेशा महत्वपूर्ण विचार होते हैं।

12. अपीलकर्ता की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ वकील श्री ए.वी. सावंत ने यह प्रस्तुत करने के लिए विभिन्न निर्णयों पर निर्भर किया है कि जमानत रद्द करना आसानी से दी जाने वाली बात नहीं है। उन्होंने हमारा ध्यान में इस न्यायालय के फैसले भागीरथसिंह बनाम गुजरात राज्य 1984

(1) एससीसी 284 की ओर आकर्षित किया है। जहां इस न्यायालय ने देखा है कि जमानत रद्द करने के आदेश के लिए बहुत ही ठोस और जबरदस्त परिस्थितियां आवश्यक हैं, और जमानत देने की शक्ति का प्रयोग इस तरह नहीं किया जाना चाहिए जैसे कि यह अन्वीक्षा से पहले की सजा हो। अदालत ने उस मामले में माना है कि ऐसी स्थिति में महत्वपूर्ण विचार यह है कि क्या अभियुक्त अपने मुकदमे के लिए आसानी से उपलब्ध होगा, और क्या वह सबूतों के साथ छेड़छाड़ करके अपने पक्ष में दिए गए विवेक का दुरुपयोग कर सकता है।

13. श्री पंढरीनाथ रामचन्द्र पवार, डिप्टी एस.पी., जलगांव, जो जांच अधिकारी हैं, ने इस न्यायालय में दिनांक 28.9.2012 को जवाब में एक विस्तृत हलफनामा दायर किया है, जिसमें श्री सुरेशदादा जैन और कुछ लोगों के बारे में भारी सामग्री रिकॉर्ड में दर्ज की गई है। अपीलकर्ता सहित मुख्य आरोपियों ने मामले के विभिन्न चरणों में दबाव की रणनीति का सहारा लिया है। अपीलकर्ता के खिलाफ अन्य बयानों के अलावा, उन्होंने विशेष रूप से निम्नलिखित सामग्री को रिकॉर्ड पर रखा है: -

(i) अपने हलफनामे के पैराग्राफ 5 (iii) में उन्होंने रिकॉर्ड पर रखा है कि अपीलकर्ता 29.3.2006 को पुलिस स्टेशन पर एक 'मोर्चा' (यानी विरोध करने के लिए एक जुलूस) लाया था। उन्होंने उसमें इस प्रकार कहा है:-

"अपराध दर्ज होने के समय से ही, याचिकाकर्ता-अभियुक्तों ने याचिकाकर्ता और सुरेश जैन के नेतृत्व में पुलिस स्टेशन पर मोर्चा लाकर पुलिस द्वारा खुद को गिरफ्तार करने की मांग करके जांच मशीनरी पर दबाव बनाने की कोशिश की है, इसलिए यह अपराध 29.3.2006 को अपराध संख्या 27/2006 के रूप में वर्तमान याचिकाकर्ता सहित पार्षदों के खिलाफ दर्ज किया गया।"

उन्होंने इस शपथ पत्र में स्टेशन डायरी प्रविष्टि दिनांक 30.3.2006 का उद्धरण अनुलग्नक आर 2 के रूप में संलग्न किया है। स्टेशन डायरी के इस उद्धरण में दर्ज है कि अपीलकर्ता सहित कुछ नगर पार्षदों ने नगर आयुक्त श्री प्रवीण गेदाम के खिलाफ अविश्वास प्रस्ताव पेश किया था, जिन्होंने शिकायत दर्ज कराई थी, जिसके बाद उन पर मुकदमा चलाया गया और फिर इन पार्षदों ने काउंसिल हॉल में हंगामा किया। इसके बाद उन्होंने थाने तक मोर्चा निकाला और प्रदर्शन किया। इस स्टेशन डायरी प्रविष्टि में अपीलकर्ता को विशेष रूप से 'मोर्चा' का नेतृत्व करने वाले व्यक्ति के रूप में नामित किया गया है।

(ii) इसके बाद, उन्होंने रिकॉर्ड पर रखा है कि अपीलकर्ता सहित सुरेशदादा जैन और उनके सहयोगियों ने विभिन्न अवसरों पर 'मोर्चा' निकालने, जांच अधिकारी को धमकी देने, सिविल सर्जन को थप्पड़ मारने

आदि जैसी दबाव रणनीति का सहारा लिया, और इस प्रकार उन्होंने शहर में आतंक का माहौल पैदा कर दिया। इसके बाद इस संबंध में उन्होंने पैराग्राफ XXV और XXVI में इस प्रकार कहा है:-

> "[XXV) उपरोक्त सभी आचरण से स्पष्ट रूप से पता चलता है कि याचिकाकर्ता ने स्वयं और अपने समर्थकों के माध्यम से समाज में एक संदेश भेजा है कि वे गवाहों, शिकायतकर्ता, जो आई.ए.एस. अधिकारी हैं, जांच अधिकारी हैं, जो आई.पी.एस. अधिकारी हैं, को सबक सिखाने में सक्षम हैं। , जेलर, जो कि प्रथम वर्ग ऑफिसर हैं और डॉ. राठौड़, जो कि सिविल अस्पताल के प्रथम वर्ग ऑफिसर भी हैं, तो शायद कोई भी उनके खिलाफ जाने की हिम्मत नहीं कर सकता।
>
> [XXVI] इसके अलावा, उन्होंने जलगांव शहर के समाज में आतंकित माहौल पैदा कर दिया है। दरअसल, इस मामले में ज्यादातर गवाह आम लोग हैं और कई गवाह जलगांव नगर निगम में कर्मचारी हैं, जहां इस समूह की पार्टी सत्ता में है, इसलिए मानवीय संभावनाओं को ध्यान में रखते हुए, गवाह वर्तमान आरोपियों और अन्य आरोपियों के खिलाफ गवाही देने के लिए आगे नहीं आएंगे।"

14. अपीलकर्ता के विद्वान वरिष्ठ वकील श्री ए.वी. सावंत ने प्रस्तुत किया कि ये आरोप मूल रूप से सुरेशदादा जैन के खिलाफ हैं और यहां अपीलकर्ता के खिलाफ नहीं हैं। इस निवेदन को स्वीकार करना कठिन है। दिनांक 30.3.2006 की स्टेशन डायरी प्रविष्टि में विशेष रूप से अपीलकर्ता का नाम उन लोगों में दर्ज किया गया है जिन्होंने पुलिस स्टेशन में 'मोर्चा' निकाला था। डिप्टी एसपी ने अपने हलफनामे में जो कहा है उससे यह भी स्पष्ट है कि अपीलकर्ता श्री सुरेशदादा जैन के साथ विभिन्न अवसरों पर जुड़ा था जब कानून को हाथ में लेने का प्रयास किया गया था।

15. श्री पवार के उपरोक्त संदर्भित हलफनामे के पैराग्राफ 4 में यह विशेष रूप से कहा गया है कि अभियोजन पक्ष की ओर से अपीलकर्ता के खिलाफ प्रथम दृष्टया मामला बताते हुए सत्र न्यायाधीश के समक्ष एक विस्तृत तर्क दिया गया था। उसमें यह भी कहा गया है कि जलगांव नगर परिषद ने साजिश के तहत लाभार्थी के रूप में अपीलकर्ता की जलगांव कंस्ट्रक्शन कंपनी को अवैध रूप से 30 से अधिक ठेके दिए थे। वर्तमान अपराध के पंजीकरण के बाद अपीलकर्ता के पिछले आचरण को विस्तार से बताया गया, साथ ही सबूत के साथ उसके आपराधिक इतिहास को भी बताया गया, और यह तथ्य भी बताया गया कि मुख्य आरोपियों में से 3 (यानी सुरेशदादा जैन और अन्य) की जमानत याचिका दायर की गई थी जो अन्य सत्र न्यायाधीश द्वारा दिनांक 17.5.2012 और 19.5.2012 के आदेश द्वारा खारिज कर दी गई। जलगांव नगर परिषद को 169 करोड़ रुपये

की सदोष हानि हुई यह भी न्यायालय के संज्ञान में लाया गया। इसलिए, महाराष्ट्र राज्य के वकील ने प्रस्तुत किया है कि सत्र न्यायाधीश द्वारा पारित आदेश एक विकृत आदेश था क्योंकि न्यायालय ने इनमें से किसी भी कारक पर विचार नहीं किया था।

16. अपीलकर्ता की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ वकील श्री सावंत ने प्रस्तुत किया कि यह एक अच्छी तरह से स्थापित प्रस्ताव है कि "जमानत न कि जेल" कानून का नियम है, और जमानत रद्द करने को हल्के में नहीं लिया जाना चाहिए। उन्होंने भागीरथसिंह (सुप्रा) में इस न्यायालय के फैसले का हवाला दिया जहां धारा 307 आईपीसी के तहत आरोप का सामना कर रहे अपीलकर्ता को सत्र न्यायाधीश द्वारा जमानत दे दी गई थी, लेकिन उच्च न्यायालय ने जमानत रद्द कर दी थी। फैसले के पैराग्राफ 7 में इस न्यायालय ने इस प्रकार कहा है: -

> "7. हमारी राय में, ऐसा प्रतीत होता है कि विद्वान न्यायाधीश ने विद्वान सत्र न्यायाधीश द्वारा दिए गए विवेकाधीन आदेश में हस्तक्षेप करके जमानत रद्द करने के निर्देश के सवाल की जांच करते समय खुद को गलत दिशा में निर्देशित किया है। कोई भी उच्च न्यायालय के विद्वान न्यायाधीश की चिंता की सराहना कर सकता था। न्यायालय ने पाया कि जिन परिस्थितियों में उसने पाया कि पीड़ित पर

हमला किया गया वह एक सामाजिक और राजनीतिक कार्यकर्ता था और इसलिए आरोपी को जमानत नहीं दी जानी चाहिए, लेकिन हम इस बात की सराहना करने में विफल हैं कि उस परिस्थिति को इतना महत्वपूर्ण कैसे माना जाना चाहिए कि विवेकाधीन आदेश में हस्तक्षेप की अनुमति दी जाए। विद्वान सत्र न्यायाधीश ने जमानत दे दी। उच्च न्यायालय ने इस तथ्य को पूरी तरह से नजरअंदाज कर दिया कि उसे यह तय नहीं करना था कि जमानत दी जानी चाहिए या नहीं, बल्कि उसके समक्ष आवेदन जमानत रद्द करने के लिए था। जमानत रद्द करने का आदेश मांगने के लिए बहुत ही ठोस और जबरदस्त परिस्थितियां आवश्यक हैं ना और आज प्रवृत्ति जमानत देने की ओर है क्योंकि अब इस न्यायालय के निर्णयों की श्रृंखला से यह अच्छी तरह से तय हो गया है कि जमानत देने की शक्ति का प्रयोग इस तरह नहीं किया जाना चाहिए जैसे कि मुकदमे के विचारण से पहले ही सजा दी जा रही हो। ऐसी स्थिति में एकमात्र महत्वपूर्ण विचार यह है कि क्या अभियुक्त अपने मुकदमे के लिए आसानी से उपलब्ध होगा और क्या वह सबूतों के साथ छेड़छाड़ करके अपने पक्ष में दिए गए विवेक का दुरुपयोग कर सकता है। उच्च न्यायालय द्वारा दिया गया आदेश इन

दो प्रासंगिक विचारों पर उसकी चुप्पी से स्पष्ट है। इन्हीं कारणों से हम न्याय के हित में उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए आदेश में हस्तक्षेप करने की बाध्यकारी आवश्यकता पर विचार करते हैं।"

17. इसके बाद उन्होंने 2009 में फिदा हुसैन बोहरा बनाम महाराष्ट्र राज्य (5) एससीसी 150 के फैसले का हवाला दिया जहां सार्वजनिक धन के आपराधिक दुरुपयोग से जुड़े आरोप के मामले में कुछ आरोपियों को जमानत दी गई थी, लेकिन उच्च न्यायालय ने इसे रद्द कर दिया था। अपीलार्थी को जमानत दे दी गई। इस न्यायालय ने माना कि जमानत देने वाले आदेश की अपील पर अलग से विचार किया जाना चाहिए, हालाँकि, यह ध्यान देने योग्य बात है कि इस न्यायालय ने पैराग्राफ 8 में यह भी देखा कि अपीलीय न्यायालय द्वारा जमानत देने वाले आदेश को रद्द करने वाला आदेश सही या अन्यथा था। जमानत या जमानत रद्द करने के आदेश पर प्रत्येक मामले के विशेष तथ्यों पर विचार किया जाना था।

18. इस न्यायालय के सिद्धराम सतलिंगप्पा म्हेत्रे बनाम महाराष्ट्र राज्य और अन्य ने 2011 (1) एससीसी 694 पर बहुत अधिक निर्भर किया गया था, जिसमें इस न्यायालय ने माना है कि जहां आरोपी जांच में शामिल हो गया है, जांच एजेंसी के साथ सहयोग कर रहा है, और उसके

भागने की संभावना नहीं है, वहां अभिरक्षात्मक अनुसंधान को टाला जाना चाहिए।

19. इन दलीलों का उत्तरदाताओं के वकील द्वारा प्रतिवाद किया गया। उन्होंने पूरण बनाम रामबिलास और अन्य 2001 (6) एससीसी 338 के पेरा सं. 10 व 11 का हवाला दिया। पैराग्राफ 10 में इस न्यायालय ने दौलत राम बनाम हरियाणा राज्य (सुप्रा)का उल्लेख किया है। जिसका उल्लेख उच्च न्यायालय द्वारा आक्षेपित आदेश में भी किया गया था। इस फैसले का हवाला देने के बाद, इस न्यायालय ने नोट किया कि गैर-जमानती मामले में प्रारंभिक चरण में जमानत की अस्वीकृति या पहले से दी गई जमानत को रद्द करने पर अलग-अलग आधार पर विचार किया जाना चाहिए। पहले से दी गई जमानत को रद्द करने का निर्देश देने वाले आदेश के लिए बहुत ही ठोस और जबरदस्त परिस्थितियाँ आवश्यक हैं। न्यायालय ने यह भी कहा है कि यह माना गया है कि आम तौर पर जमानत रद्द करने का आधार मोटे तौर पर न्याय प्रशासन के उचित पाठ्यक्रम में हस्तक्षेप या हस्तक्षेप करने का प्रयास या आरोपी को दी गई रियायत की चोरी या दुरुपयोग है। इसके बाद, इस न्यायालय ने पैराग्राफ 10 में कहा:-

> "10..... हालाँकि, यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि इस न्यायालय ने स्पष्ट किया कि ये उदाहरण केवल उदाहरणात्मक हैं, संपूर्ण नहीं। जमानत रद्द करने का एक

ऐसा आधार वह होगा जहां रिकॉर्ड पर मौजूद सामग्री और सबूतों को नजरअंदाज करते हुए इस प्रकृति के जघन्य अपराध में जमानत देने का विकृत आदेश पारित किया जाता है और वह भी बिना कोई कारण बताए। ऐसा आदेश क़ानून के सिद्धांतों के ख़िलाफ़ होगा. न्याय के हित में यह भी आवश्यक होगा कि इस तरह के विकृत आदेश को रद्द कर दिया जाए और जमानत रद्द कर दी जाए। यह याद रखना चाहिए कि ऐसे अपराध बढ़ रहे हैं और इनका समाज पर बहुत गंभीर प्रभाव पड़ता है। इसलिए, ट्रायल कोर्ट द्वारा विवेक के मनमाने और गलत प्रयोग को ठीक किया जाना चाहिए।"

पैराग्राफ 11 में कोर्ट ने गुरुचरण सिंह बनाम राज्य (दिल्ली प्रशासन) ने 978 (1) एससीसी 118 का हवाला दिया है और उसके बाद देखा कि धारा 439 (2) के तहत उच्च न्यायालय का दरवाजा खटखटाने का उपाय भी उपलब्ध है, जहां राज्य सत्र न्यायाधीश द्वारा अनुचित आधार पर जमानत दिए जाने से व्यथित है। अवैध या विकृत आदेश। उनका अनुच्छेद 11 इस प्रकार है:-

"11. इसके अलावा, यह ध्यान में रखा जाना चाहिए कि अनुचित अवैध या विकृत आदेश को रद्द करने की

अवधारणा इस आधार पर जमानत रद्द करने की अवधारणा से बिल्कुल अलग है कि आरोपी ने खुद दुर्व्यवहार किया है या कुछ नए तथ्यों की आवश्यकता है इस तरह के रद्दीकरण के लिए। यह स्थिति इस न्यायालय द्वारा गुरचरण सिंह बनाम राज्य (दिल्ली प्रशासन ((1978)1 एससीसी118) में स्पष्ट की गई है। उस मामले में न्यायालय ने निम्नानुसार देखा। (एससीसी पृष्ठ 124, पैरा 16)

"हालाँकि, यदि सत्र न्यायालय ने किसी आरोपी व्यक्ति को जमानत के लिए स्वीकार कर लिया है, तो राज्य के पास दो विकल्प हैं। यदि कुछ नई परिस्थितियाँ उत्पन्न हुई हैं, जिनके बारे में राज्य को पहले से जानकारी नहीं थी तो वह सत्र न्यायाधीश के पास जा सकता है। राज्य भी उच्च न्यायालय वरिष्ठ होने के नाते धारा 439(2) के तहत अभियुक्त को हिरासत में लेने बाबत उच्च न्यायालय से संपर्क कर सकता है । हालाँकि, जब राज्य सत्र न्यायाधीश के जमानत देने के आदेश से व्यथित है और पहले से मौजूद परिस्थितियों को छोड़कर कोई नई परिस्थितियाँ सामने नहीं आई हैं, तो राज्य के लिए सत्र न्यायाधीश को फिर से सम्पर्क करना व्यर्थ है और वह कानून भी सही है कि जमानत रद्द करने के लिए उच्च न्यायालय का रुख

करें। यह स्थिति उच्च न्यायालय की तुलना में सत्र न्यायालय की अधीनस्थ स्थिति का अनुसरण करती है।"

(जोर दिया गया)

20. इस न्यायालय के निर्णय 2005 (8) एससीसी 21 में यूपी राज्य बनाम अमरमणि त्रिपाठी पर भी समर्थन हेतु निर्भर। उस मामले में प्रत्यर्थी और उसकी पत्नी को 29.4.2001 और 8.7.2004 को उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश द्वारा जमानत दी गई थी। उत्तरदाताओं द्वारा गवाहों को डराने-धमकाने की स्पष्ट संभावना सहित कारकों की समग्रता को ध्यान में रखते हुए, इस न्यायालय ने अपने आदेश दिनांक 26.9.2005 द्वारा जमानत रद्द कर दी, जो जमानत दिए जाने के एक वर्ष से अधिक समय बाद पारित किया गया था। हमारे उद्देश्य के लिए जो प्रासंगिक है वह इस न्यायालय ने अनुच्छेद 18 में निम्नलिखित प्रभाव से देखा है: -

18. जबकि यह अस्पष्ट आरोप कि अभियुक्त साक्ष्यों या गवाहों के साथ छेड़छाड़ कर सकता है, जमानत से इनकार करने का आधार नहीं हो सकता है, यदि अभियुक्त ऐसे चरित्र का है कि उसकी बड़े पैमाने पर उपस्थिति ही गवाहों को डरा देगी या यदि यह दिखाने के लिए सामग्री है वह अपनी स्वतंत्रता का उपयोग न्याय को नष्ट करने या सबूतों के साथ छेड़छाड़ करने के लिए करेगा, तो जमानत अस्वीकार कर दी जाएगी...

(जोर दिया गया)

21. मसरूर बनाम उत्तर प्रदेश राज्य व अन्य 2009 (14) एससीसी 286 का संदर्भ दिया गया था जिसमें इस न्यायालय ने पैराग्राफ 12 में देखा है कि यह न्यायालय जमानत देने या खारिज करने के उच्च न्यायालय के आदेश में हस्तक्षेप नहीं करता है बल्किजहां जमानत देने के मामले में स्पष्ट त्रुटि थी, वहां हस्तक्षेप की आवश्यकता थी। अनुच्छेद 15 में इस न्यायालय ने इस प्रकार कहा: -

15. इस तथ्य से इनकार नहीं किया जा सकता है कि किसी व्यक्ति की स्वतंत्रता अनमोल है और अदालतों द्वारा उत्साहपूर्वक इसकी रक्षा की जानी चाहिए। बहरहाल, ऐसी सुरक्षा हर स्थिति में पूर्ण नहीं हो सकती। व्यक्ति की स्वतंत्रता के मूल्यवान अधिकार और सामान्य रूप से समाज के हित को संतुलित करना होगा। किसी अपराध के आरोपी व्यक्ति की स्वतंत्रता मामले की तात्कालिकता पर निर्भर करेगी। यह संभव है कि किसी भी स्थिति में, समुदाय का सामूहिक हित संबंधित व्यक्ति की व्यक्तिगत स्वतंत्रता के अधिकार से अधिक हो सकता है...(जोर दिया गया)

22. निम्मगड्डा प्रसाद बनाम केंद्रीय जांच ब्यूरो 2013 (7) एससीसी 466 के पेरा संख्या 25 को हमारे संज्ञान में लाया गया था जिसमें आर्थिक अपराधों के संबंध में न्यायालय ने निम्नानुसार देखा है: -

"25. आर्थिक अपराध एक अलग वर्ग का गठन करते हैं और जमानत के मामले में एक अलग दृष्टिकोण के साथ

देखे जाने की आवश्यकता है। गहरी साजिशों वाले और सार्वजनिक धन के भारी नुकसान से जुड़े आर्थिक अपराध को गंभीरता से देखने की जरूरत है और इसे एक गंभीर अपराध माना जाना चाहिए। पूरे देश की अर्थव्यवस्था को प्रभावित कर रहा है और इस तरह देश के वित्तीय स्वास्थ्य के लिए गंभीर खतरा पैदा हो रहा है।" 1-

(जोर दिया गया)

23. हमने अपीलकर्ताओं के साथ-साथ उत्तरदाताओं के वकील की दलीलों पर भी गौर किया है। वर्तमान मामले में हम इस सवाल से चिंतित हैं कि क्या उच्च न्यायालय ने अपीलकर्ता को दी गई जमानत को रद्द करने में गलती की थी। उपरोक्त पहलुओं पर ध्यान देने के बाद हमारा स्पष्ट मानना है कि सत्र न्यायालय ने धारा 439(1) के अनिवार्य प्रावधान का अनुपालन नहीं किया है। यह परंतुक अनुदान देने से पहले यह निर्धारित करता है किसी ऐसे व्यक्ति को जमानत देना जिस पर ऐसे अपराध का आरोप है जो आजीवन कारावास से दंडनीय है, और जो विशेष रूप से सत्र न्यायालय द्वारा विचारणीय है, यह सरकारी अभियोजक को जमानत के लिए आवेदन की सूचना देगा। मौजूदा मामले में, तथ्यों से पता चलता है कि अपीलकर्ता 21.5.2012 को विद्वान सत्र न्यायाधीश के समक्ष उपस्थित हुआ, जब उसकी जमानत की अर्जी पर विचार किया गया। सत्र न्यायाधीश

ने एक आदेश पारित किया 'आईओ. के कहने के लिए ओर मामला वहीं ओर उसी समय सुन लिया गया. अभियोजक ने कम से कम 2 दिनों की रिमांड के लिए आवेदन किया जिसे अस्वीकार कर दिया गया। धारा 439-(1) के तहत प्रावधान के तहत नोटिस अभियोजक को यह बताने का उचित और पूर्ण अवसर प्रदान करता है कि जमानत क्यों नहीं दी जानी चाहिए। इस मामले में प्रारंभिक आरोपपत्र स्वयं 268 पृष्ठों से अधिक का था। सत्र न्यायाधीश को अभियोजक को इस आरोप पत्र के आधार पर जवाब देने के लिए पर्याप्त समय देना चाहिए था, ताकि वह एक सुविचारित आदेश पारित कर सके। नतीजतन, जमानत का आदेश आरोप पत्र की सामग्री को प्रतिबिंबित नहीं करता है।

24. जैसा कि डिप्टी एस.पी. श्री पवार ने अपने हलफनामे में बताया है कि हालांकि मामले की सुनवाई वहीं उसी समय हो गई थी, परन्तु अभियोजक ने अपीलकर्ता के खिलाफ प्रथम दृष्टया मामला होने की ओर इशारा करते हुए एक विस्तृत तर्क दिया था। वर्तमान अपराध के पंजीकरण के बाद अपीलकर्ता के पिछले आचरण को भी विस्तार से बताया गया था और साथ ही सबूत के साथ उसके आपराधिक इतिहास को भी बताया गया था, और यह तथ्य भी बताया गया था कि मुख्य आरोपियों में से 3 (यानी सुरेशदादा जैन और अन्य) की जमानत याचिका दायर की गई थी जो अन्य सत्र न्यायाधीश द्वारा दिनांक 17.5.2012 और 19.5.2012 के आदेश द्वारा खारिज कर दिया गया था कि जलगांव नगर परिषद को 169 करोड़

रुपये का नुकसान हुआ है यह भी न्यायालय के संज्ञान में लाया गया। महाराष्ट्र राज्य के वकील ने सही ही कहा है कि ट्रायल कोर्ट द्वारा पारित आदेश एक विकृत आदेश था क्योंकि कोर्ट ने इनमें से किसी भी कारक पर विचार नहीं किया था।

25. अपीलकर्ता और अभियुक्त पर एक ऐसे अपराध का आरोप लगाया गया है जिसके परिणामस्वरूप आजीवन कारावास की सजा हो सकती है। यह एक गंभीर आरोप है जिसका समर्थन एक 268 पन्नों से अधिक की विस्तृत आरोप-पत्र में है उसमें कहा गया है कि जलगांव नगर निगम ने साजिश के तहत लाभार्थी के रूप में अपीलकर्ता की जलगांव कंस्ट्रक्शन कंपनी को अवैध रूप से 30 से अधिक ठेके दिए थे। जाहिर तौर पर अभियोजक को आरोपी से पूछताछ करने के लिए समय की आवश्यकता थी और ऐसी स्थिति में कम से कम दो दिनों तक हिरासत में पूछताछ से इनकार नहीं किया जा सकता था। इससे प्रासंगिक जानकारी का पता लगाकर जांच में सहायता मिल सकती थी। हालाँकि, जमानत आदेश उसी दिन पारित कर दिया गया था। हम इस तथ्य से अवगत हैं कि एक नागरिक की स्वतंत्रता, भले ही वह आरोपी हो, निस्संदेह महत्वपूर्ण है, लेकिन साथ ही जब अभियोजक ने अदालत को बताया था कि अपीलकर्ता की भूमिका इन तीनों से कम नहीं थी अन्य जिनकी जमानत खारिज कर दी गई थी, विद्वान न्यायाधीश को अभिरक्षात्मक अनुसंधान को उचित

ठहराते हुए इन परिस्थितियों पर उचित परिश्रम से विचार करना चाहिए था।

26. इस प्रकार यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि सत्र न्यायाधीश द्वारा पारित आदेश सीआरपीसी की धारा 439(1) के प्रावधान की अनिवार्य आवश्यकता के उल्लंघन में पारित आदेश था। यह रिकॉर्ड पर मौजूद सामग्री की अनदेखी करने वाला एक आदेश भी है, और इसलिए बिना किसी औचित्य के और विकृत आदेश है। जैसा कि इस न्यायालय ने पुरण बनाम रामबिलास (सुप्रा) में कहा है उच्च न्यायालय के पास सीआरपीसी की धारा 439 (2) के तहत जमानत देने के अनुचित, अवैध या विकृत आदेश को रद्द करने की शक्ति है।। यह आरोपी के दुराचरण के आधार से स्वयं के द्वारा कारित स्वतंत्र आधार है।

27. वर्तमान मामले में, अपीलकर्ता द्वारा गवाहों और यहां तक कि जांच अधिकारी पर दबाव डालने के लिए किए गए प्रयासों को डिप्टी एसपी श्री पवार के हलफनामे के माध्यम से स्पष्ट रूप से रिकॉर्ड पर रखा गया है। उस आधार पर यह भी कहा जा सकता है कि यदि अपीलकर्ता को रोका नहीं गया तो वह गवाहों पर दबाव डालेगा। यह स्थिति होने के कारण, हम उस आधार पर भी जमानत रद्द करने के उच्च न्यायालय के आदेश में कोई गलती नहीं पा सकते हैं। आदेश में जमानत रद्द करने को उचित ठहराने वाली ठोस और भारी परिस्थितियों को दर्ज किया गया है। आर्थिक अपराध

की प्रकृति एवं गंभीरता तथा आर्थिक अपराध पर इसका प्रभावऐसे मामले में समाज हमेशा महत्वपूर्ण विचार रखता है, और जमानत आवेदनों पर आदेश पारित करते समय न्यायालय द्वारा उन्हें स्पष्ट रूप से निपटाया जाना चाहिए।

28. हमें अपीलकर्ता की ओर से उठाई गई एक और आपत्ति पर ध्यान देना चाहिए, अर्थात् प्रत्यर्थी संख्या 2 से 4 के पास जमानत रद्द करने की मांग करने वाला आवेदन दायर करने का कोई अधिकार नहीं था। यह तर्क दिया गया है कि प्रतिवादी संख्या 3 और 4 ने ट्रायल कोर्ट के समक्ष कोई आवेदन भी दायर नहीं किया था। बाद में वे जमानत देने के आदेश को रद्द करने और रद्द करने के लिए एसएलपी (सीआरएल) आवेदन दायर करके उच्च न्यायालय में जाने के लिए प्रतिवादी नंबर 2 के साथ शामिल हो गए। इन उत्तरदाताओं की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ वकील श्री मारलापाइले और विद्वान वकील सुश्री कामिनी जयसवाल ने जवाब में बताया कि उच्च न्यायालय में दायर आपराधिक आवेदन सीआरपीसी की धारा 482 के साथ पठित धारा 439(2) के तहत दायर किया गया था। उक्त आपराधिक आवेदन का पैराग्राफ 2 इस प्रकार बताया गया है:-

> "2. आवेदकों का कहना है कि वे जलगांव के निवासी हैं। वे भारत के नागरिक हैं। वे करदाता हैं। वे नगर निगम द्वारा जलगांव के नागरिकों को प्रदान की जाने वाली

विभिन्न नीतियों और सुविधाओं के लाभार्थी हैं। आवेदक प्रत्यर्थी नंबर 2 अन्य आरोपियों द्वारा कारित अपराध से पीड़ित है। आवेदकों के पास प्रत्यर्थी नंबर 2 और अन्य आरोपी व्यक्तियों को दी गई जमानत को रद्द करने की मांग करने का अधिकार है।"

29. इन विद्वान वकीलों द्वारा यह प्रस्तुत किया गया कि प्रत्यर्थी नंबर 2 अभियोजन की सहायता के लिए सत्र न्यायाधीश के समक्ष उपस्थित हुआ था, जो जमानत देने के पारित आदेश में दर्ज है। जहां तक प्रत्यर्थी संख्या 2 से 4 द्वारा उच्च न्यायालय के समक्ष उपरोक्त आपराधिक आवेदन दाखिल करने का सवाल है, उस पर उच्च न्यायालय में विशेष रूप से आपत्ति नहीं की गई है, और इसलिए, उच्च न्यायालय के पास इस पर गौर करने का कोई अवसर नहीं था। ऐसी आपत्ति अब इस कोर्ट में उठाई जा रही है. विद्वान वकील ने प्रस्तुत किया कि प्रत्यर्थी संख्या 2 से 4 ने सीआरपीसी की धारा 482 के तहत उच्च न्यायालय के अंतर्निहित क्षेत्राधिकार का इस्तेमाल किया था, और इस तरह के आवेदन पर विचार करने की उच्च न्यायालय को प्राप्त है। यह इस न्यायालय द्वारा पूरन बनाम रामबिलास (सुप्रा) के पैराग्राफ 17 में निर्धारित किया है। उस मामले में सेशन से जमानत मिल गयी थी और उच्च न्यायालय द्वारा जमानत आदेश रद्द कर दिया गया था, राज्य की किसी याचिका पर नहीं, बल्कि

शिकायतकर्ता द्वारा दायर याचिका सीआरपीसी की धारा 439 (2) और 482 पर।

30 हमारे विचार में अपीलकर्ता द्वारा उठाई गई आपत्ति पूरण बनाम रामबिलास (सुप्रा) के पैराग्राफ 17 अनुसार अनवरत नहीं रहेगी जो इस प्रकार है-

17. इसके अलावा, भले ही यह एक अंतर्वर्ती आदेश हो, धारा 482 के तहत उच्च न्यायालय का अंतर्निहित क्षेत्राधिकार आपराधिक प्रक्रिया संहिता की धारा 397(3) के प्रावधानों से प्रभावित नहीं होता है। यह कि उच्च न्यायालय स्व-लगाए गए प्रतिबंध के आधार पर धारा 482 के तहत अपने अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करने से इनकार कर सकता है, यह एक अलग पहलू है। इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता है कि न्याय के लक्ष्य को हासिल करने के लिए, उच्च न्यायालय उस आदेश में हस्तक्षेप कर सकता है जो न्याय की विफलता का कारण बनता है या स्पष्ट रूप से अवैध है या अनुचित है (मधु लिमये बनाम महाराष्ट्र राज्य (1977) 4 एससीसी 551 और कृष्णन बनाम कृष्णावेणी (1997) 4 एससीसी 241)

(जोर दिया गया)

इन सभी कारणों से, हमें इस अपील में कोई गुण नहीं दिखता और यह विचार करने योग्य नहीं है।

31. हालाँकि इस अपील पर विचार नहीं किया जा रहा है, हमने पाया है कि अपीलकर्ता ने 4 अन्य अभियुक्तों के साथ, जिन्हें जमानत से वंचित कर दिया है, गवाहों को डराने-धमकाने के कई प्रयास किए थे, और यहाँ तक कि जाँच अधिकारी को भी धमकाया था। गवाहों में से कुछ जलगांव नगर निगम के कर्मचारी हैं, और जाहिर तौर पर अपीलकर्ता और 4-आरोपी, हालांकि जेल में हैं, फिर भी उन्हें प्रभावित करने के लिए हर संभव प्रयास कर सकते हैं, और अगर यह मुकदमा जलगांव में आयोजित किया जाता है तो मुकदमे को खराब कर सकते हैं। राज्य की ओर से उपस्थित विद्वान वकील श्री खरदे ने प्रस्तुत किया है कि यह उचित होगा कि मुकदमे को जिले के बाहर स्थानांतरित किया जाए, श्री सावंत, विद्वान वरिष्ठ वकील अपीलकर्ता की ओर से को इस पर कोई आपत्ति नहीं है। उत्तरदाताओं संख्या 2 से 4 की ओर से उपस्थित श्री मारियापल्ले और मप्पेलंती जयसवाल ने भी इस सबमिसन का समर्थन किया है, हम इस सबमिसन की योग्यता को काफी हद तक देखते हैं। इस प्रकृति का परीक्षण, इस मामले में प्रत्येक परीक्षण, एक स्वतंत्र और भयमुक्त वातावरण में आयोजित किया जाना चाहिए। इसलिए, वर्तमान मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में हमारा विचार है कि इस सत्र मामले की सुनवाई उस जिले के बाहर स्थानांतरित की जानी चाहिए। धुले जिले में स्थानांतरण उचित होगा क्योंकि वह जिला जलगांव जिले से सटा हुआ है, और यह बॉम्बे उच्च न्यायालय की औरंगाबाद पीठ के अधिकार क्षेत्र में भी आता है।

32. निष्कर्ष निकालने से पहले हम यह स्पष्ट कर देते हैं कि यहां की गई टिप्पणियाँ यह तय करने के उद्देश्य से हैं कि क्या उच्च न्यायालय ने अपीलकर्ता को दी गई जमानत को रद्द करने में किसी भी तरह से गलती की थी। यह आदेश उस सामग्री के आधार पर पारित किया जा रहा है जो उस उद्देश्य के लिए रिकॉर्ड पर रखी गई है। बताने की जरूरत नहीं है, लेकिन हम यह स्पष्ट कर देते हैं कि जब भी मुकदमा चलाया जाएगा, इसका निर्णय साक्ष्यों के आधार पर किया जाएगा, जिन्हें मुकदमे के दौरान रिकॉर्ड पर लाया जाएगा।

33. तदनुसार अपील खारिज की जाती है। अपीलकर्ता दो सप्ताह के भीतर सिटी पुलिस स्टेशन जलगांव में आत्मसमर्पण करेगा। 3.2.2006 को सिटी पुलिस स्टेशन जलगांव में दर्ज अपराध/एफआईआर संख्या 13/2006 से उत्पन्न सत्र मामला एतद्द्वारा अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश, धुले, भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 के तहत मामलों के प्रभारी को स्थानांतरित किया जाता है। । विद्वान अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश, जलगांव इस मामले को तलब कर संबंधित कार्यवाही के रिकॉर्ड को चार सप्ताह के भीतर उक्त न्यायालय में स्थानांतरित कर देंगे। बॉम्बे हाई कोर्ट के रजिस्ट्रार जनरल को यह सुनिश्चित करने का निर्देश दिया गया है कि आवश्यक अनुवर्ती कदम तुरंत उठाए जाएं। रजिस्ट्री इस फैसले की एक प्रति रजिस्ट्रार जनरल हाई कोर्ट बॉम्बे, जिला न्यायाधीश, जलगांव और जिला न्यायाधीश, धुले को भेजेगी।

अपील खारिज

यह अनुवाद ए.आई. टूल 'सुवास' की सहायता से अपर जिला एवं सेशन न्यायाधीश संख्या 01 किशनगढ़ जिला अजमेर राजस्थान श्रीमति दमयंती पुरोहित (आर.जे.एस.) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।